दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

<u>निर्णय की तिथि: 22 फरवरी, 2024</u>

<u>सि.अ.(वाणि. बौ.सं.अनु.-पौ.कि.) 3/2022, अं.आ. 16633/2022</u>

यूपीएल लिमिटेड .....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री आदर्श रामानुजन, सुश्री अर्चना सहदेव, श्री सिद्धार्थ राज चौधरी, श्री स्कंद शेखर, अधिवक्तागण।

बनाम

रजिस्ट्रार और अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री चेतन लोकुर, श्री के.वी. ग्रिश चौधरी, श्री डी. सत्य साई सुमंत, श्री वैभव कौल, सुश्री सौम्या सिंह, प्र-2 के लिए अधिवक्तागण।

श्री हरीश वैद्यनाथन शंकर, कें.स.स्था.अधि., श्री श्रीश कुमार मिश्रा, श्री अलेक्जेंडर मथाई पैकाडे और श्री कृष्णन वी., अधिवक्तागण।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति श्री संजीव नरूला

<u>निर्णय</u>

<u>न्या. संजीव नरूला (मौखिक):</u>

1. पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 2001 [***"अधिनियम"***] की धारा 56 के अंतर्गत वर्तमान अपील प्रत्यर्थी सं. 1/रजिस्ट्रार, पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण द्वारा पारित 25 जुलाई, 2022 के आदेश [***"आक्षेपित आदेश"***] को आक्षेपित करती है।

2. आक्षेपित आदेश ने अधिनियम की धारा 24(5) के अंतर्गत दायर अपीलार्थी के आवेदन को खारिज कर दिया है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ क्षतिपूर्ति, व्यादेश और लेखे देने की राहत की माँग की गई थी। उस समय, उक्त आवेदन पर व्यापक विचारण हुआ था, अंतिम तर्क सुने गए थे और गुणागुण के आधार पर निर्णय आने की उम्मीद थी। बहरहाल, रजिस्ट्रार ने आवेदन को संधार्य नहीं माना, यह तर्क देते हुए कि ऐसी कार्रवाई केवल पौधों की किस्म पंजीकरण के अनुदान के बाद शुरू की जा सकती है, न कि तब जब पंजीकरण के लिए आवेदन अभी भी विचाराधीन हो। परिणामस्वरूप, समय से पहले दायर होने के आधार पर आवेदन खारिज कर दिया गया। रजिस्ट्रार का यह तर्क आक्षेपित आदेश के निम्नलिखित अंश में समाहित है:

> *"इस मामले में शामिल मुद्दे का मूल यह है कि आवेदक ने एवी 508-मादा जनक (पंजी/20187/164 पी1) और एवी 509 नर जनक (पंजी/2018/164 पी2) के साथ अपनी भिंडी की किस्मों राधिका*

(पंजी/2018/164 एच) के संयुक्त पंजीकरण के लिए आवेदन किया है। आवेदक ने अपने 24(5) आवेदन में बयान दिया है कि प्रत्यर्थी बिंदू और एनबीएच-45 किस्मों का व्यावसायीकरण करके आवेदक की किस्मों राधिका संकर और ए वी 509 नर जनक और ए वी 508 मादा जनक के व्यावसायिक हितों का दुरुपयोग कर रहा है।

इस मामले से जुड़े मुख्य मुद्दों पर चर्चा करने से पहले, मैं सबसे पहले इस मुद्दे पर न्यायनिर्णय लेने को इच्छुक हूँ कि क्या धारा 24(5) का आवेदन किस्म के पंजीकरण से पहले संधार्य है। धारा 24(5) निम्नानुसार उद्धृत की गई है:-

> *"24(5) पंजीकरण के लिए आवेदन दाखिल करने और ऐसे आवेदन पर प्राधिकरण द्वारा लिए गए निर्णय के बीच की अवधि के दौरान किसी तीसरे पक्ष द्वारा किए गए किसी भी अपमानजनक कृत्य के विरुद्ध प्रजनक के हितों की रक्षा के लिए रजिस्ट्रार को ऐसे निर्देश जारी करने की शक्ति होगी।"*

इस प्रकार, धारा 24(5) यह स्पष्ट करती है कि रजिस्ट्रार के पास आवेदन दाखिल करने की तिथि से पंजीकरण की तिथि तक तीसरे पक्ष द्वारा किए गए किसी भी अपमानजनक कृत्य के विरुद्ध प्रजनक के हितों की रक्षा के लिए निर्देश जारी करने की शक्ति है। तो जो संरक्षित है वह केवल प्रजनक का 'हित' है न कि प्रजनक का 'अधिकार'। आवेदन दाखिल करने की तिथि से पंजीकरण तक प्रजनक का 'हित' केवल पंजीकरण पर 'अधिकार' में बदल जाता है। इस प्रकार कोई हित एक अपूर्ण या अपूर्ण अधिकार है जिसे अधिकार के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त व्यापार चिह्न और प्रतिलिप्यधिकार के विपरीत, पीपीवीएफआर अधिनियम 2001 के अंतर्गत केवल पंजीकरण ही पौधे प्रजनक को अधिकार प्रदान करता है और उन्हें अधिकार प्रदान करता है जिन्हें नागरिक और आपराधिक कार्यवाहियों के माध्यम से लागू किया जा सकता है। इसलिए, यह भी स्पष्ट है कि पूर्व-पंजीकरण करने वाले प्रजनक का अपनी किस्म पर कोई अधिकार नहीं है, जिसे किस्म के पंजीकरण के बाद ही आवेदन दाखिल करने की तिथि से पंजीकरण तक अधिनियम की

धारा 24 (5) के अंतर्गत संरक्षित किया जा सकता है। इसलिए किस्म के पंजीकरण पर, यदि किसी पंजीकृत प्रजनक की किस्म का आवेदन दाखिल करने की तिथि से पंजीकरण की तिथि तक और उसके बाद भी दुरुपयोग किया गया है। फिर ऐसे मामले में पंजीकृत प्रजनक के पास दो विकल्प होते हैं, अर्थात् आवेदन दाखिल करने की तिथि से पंजीकरण देने की तिथि (वर्तमान अधिसूचित किस्मों के मामले में अधिसूचना की तिथि) के बीच की अवधि के संबंध में, किस्म के पंजीकरण पर आवेदक अपनी किस्म के दुरुपयोग के संबंध में निर्देश जारी करने के लिए रजिस्ट्रार को पीपीवी और एफआर अधिनियम, 2001 की धारा 24 (5) के अंतर्गत एक आवेदन दायर कर सकता है और पंजीकरण की तिथि से पंजीकृत प्रजनक पीपीवीएफआर अधिनियम, 2001 की धारा 64 के अंतर्गत अतिलंघन के लिए मुकदमा दायर कर सकता है।

यदि किसी आवेदन के लंबित रहने के दौरान पीपीवीएफआर अधिनियम, 2001 की धारा 24(5) के अंतर्गत किसी तीसरे पक्ष के विरुद्ध कोई निर्देश पारित किया जाता है, तो पंजीकरण तक आवेदक प्रजनक को कोई अधिकार नहीं मिलता है, फिर निर्देश पारित होने के बाद और पंजीकरण से पहले विपक्ष द्वारा आवेदन खारिज कर दिया जाता है या अन्यथा छोड़ दिया जाता है या बंद कर दिया जाता है तो तीसरे पक्ष पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इसलिए, धारा 24(5) को आवेदक प्रजनक द्वारा केवल आवेदन दाखिल करने की तिथि और पंजीकरण प्रमाणपत्र प्रदान करने की तिथि के बीच की अवधि के संबंध में किस्म के पंजीकरण पर लागू किया जा सकता है।

मुझे यह मानने में कोई झिझक नहीं है कि धारा 24(5) के अंतर्गत एक याचिका केवल किसी किस्म के पंजीकरण पर ही संधार्य हो सकती है और निश्चित रूप से यह आवेदन दाखिल करने की तिथि से लेकर पंजीकरण प्रमाण पत्र प्रदान करने की तिथि तक की अवधि के संदर्भ में हो सकती है, लेकिन धारा 24(5) के अंतर्गत आवेदन केवल किस्म के पंजीकरण पर ही दायर और लागू किया जा सकता है। इसका कारण यह है कि विधिक तौर पर प्रजनक के हित को लागू नहीं किया जा सकता है, केवल एक अधिकार को लागू किया जा सकता है। *एक बार जब प्रजनक को*

अधिकार प्राप्त हो जाता है तो वह उस हित को भी लागू कर सकता है जो अधिनियम के अंतर्गत अधिकार में बदल गया है।

मेरे उपरोक्त तर्क के आधार पर, मेरा दृढ़ विचार है कि धारा 24(5) के अंतर्गत एक आवेदन केवल उस किस्म के पंजीकरण पर दायर किया जा सकता है जो इस आवेदन की विषय वस्तु है और तदनुसार आवेदक को उन किस्मों के पंजीकरण पर इसे दाखिल करने की स्वतंत्रता है जो इस आवेदन की विषय वस्तु हैं। तदनुसार, इस स्तर पर धारा 24(5) के अंतर्गत तत्काल आवेदन पर विचार नहीं किया जा सकता है। इसलिए, आवेदन का निपटान किया जाता है क्योंकि इसे पंजीकरण से पहले ही दायर किया गया है।"

[ज़ोर दिया गया]

3. रजिस्ट्रार की उपरोक्त समझ को ध्यान में रखते हुए, 18 जुलाई, 2023 को, पक्षकारगण के अधिवक्ता को सुनने के बाद, न्यायालय ने एक विस्तृत आदेश पारित किया और निम्नानुसार निर्देशित किया:

"8. न्यायालय की राय में इस मामले में रजिस्ट्रार की उपस्थिति आवश्यक होगी। तदनुसार, श्री हरीश वैद्यनाथन, विद्वान कें.स.स्था.अधि. से रजिस्ट्रार की ओर से नोटिस स्वीकार करने का अनुरोध किया जाता है, जो अभिलेख पर अपना मत रखेगा कि क्या धारा 24(5) का अनुप्रयोग पंजीकरण से पहले संधार्य होगा।

9. धारा 24(5) के उपबंधों और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि चूँकि मामले में विस्तृत सुनवाई की आवश्यकता होगी, प्रत्यर्थी सं. 2 को निर्देशित किया जाता है कि वह आक्षेपित किस्म, अर्थात् 'बिंदु' के विक्रय के अपने लेखे एक सीलबंद लिफाफे में इस न्यायालय के समक्ष रखे। हालाँकि, यह स्पष्ट किया गया है कि यह प्रत्यर्थी सं. 2 के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव

डाले बिना होगा और वर्तमान अपील के परिणाम के अधीन होगा। चार सप्ताह के भीतर आवश्यक कार्रवाई की जाए।

10. इसके अतिरिक्त, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कुछ भ्रम प्रतीत होता है कि रजिस्ट्रार के समक्ष अपीलार्थी द्वारा कुछ राहतें छोड़ दी गई थीं। अपीलार्थी को आवेदन में प्रार्थनाओं के सभी संस्करणों को, जो रजिस्ट्रार के समक्ष दायर किए गए थे, चार सप्ताह के भीतर विशिष्ट तिथियों के साथ अभिलेखों पर रखने का निर्देश दिया गया है।"

4. पक्षकारगण ने उपरोक्त निर्देशों का बहुत हद तक अनुपालन किया है। हालाँकि रजिस्ट्रार के कार्यालय द्वारा कोई लिखित प्रतिक्रिया दायर नहीं की गई है, रजिस्ट्रार का प्रतिनिधित्व करने वाले कें.स.स्था.अधि., श्री हरीश वैद्यनाथन शंकर का बयान है कि अधिनियम की धारा 24(5) की व्याख्या और पंजीकरण से पहले एक आवेदन की संधार्यता पर उनका दृष्टिकोण सिविल अपील सं. 19653-19654/2017 में उच्चतम न्यायालय के समक्ष रजिस्ट्रार द्वारा दायर अभिवाकों में व्यक्त किया गया है। इसकी एक प्रति न्यायालय के परिशीलन के लिए बोर्ड को सौंप दी गई है। प्रत्यर्थी सं. 2 ने सीलबंद लिफाफे में आक्षेपित किस्म के विक्रय का विवरण दाखिल किया है। इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी ने रजिस्ट्रार के समक्ष दायर आवेदन में की गई संशोधित/संशोधित प्रार्थनाओं को रेखांकित करने वाले अभिवाकों को अभिलेख में रखते हुए अतिरिक्त दस्तावेज भी दाखिल किए हैं।

5. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, न्यायालय ने पक्षकारगण के अधिवक्तागण को सुना है। शुरुआत में, हमें इस मुद्दे का समाधान करना चाहिए कि क्या अधिनियम की धारा 24(5) के अंतर्गत एक आवेदन को रजिस्ट्रार द्वारा इस आधार पर खारिज किया जा सकता था कि यह समय से पहले था क्योंकि पौधे की किस्म का कोई पंजीकरण नहीं था। सुविधा और स्पष्टता के लिए, प्रासंगिक उपबंध यहाँ नीचे दिया गया है:

> ***"24. पंजीकरण का प्रमाण पत्र जारी करना।–***
>
> *(5) पंजीकरण के लिए आवेदन दाखिल करने और ऐसे आवेदन पर प्राधिकरण द्वारा लिए गए निर्णय के बीच की अवधि के दौरान किसी तीसरे पक्ष द्वारा किए गए किसी भी अपमानजनक कृत्य के विरुद्ध प्रजनक के हितों की रक्षा के लिए रजिस्ट्रार को ऐसे निर्देश जारी करने की शक्ति होगी।"*

6. न्यायालय की राय में, उपबंध और *"पंजीकरण के लिए आवेदन दाखिल करने और ऐसे आवेदन पर प्राधिकरण द्वारा लिए गए निर्णय के बीच की अवधि के दौरान"* अभिव्यक्ति का पठन स्पष्ट रूप से प्रावधान करता है कि अधिनियम की धारा 24(5) रजिस्ट्रार को पंजीकरण के लिए आवेदन दाखिल करने और निर्णय देने के बीच की अवधि के दौरान निर्देश जारी करने की शक्ति प्रदान करती है। इस प्रकार, वर्तमान मामले में रजिस्ट्रार द्वारा लिया गया दृष्टिकोण प्रथम दृष्टया कानून के आदेश के विपरीत है। इस विसंगति को स्वीकार करते हुए

रजिस्ट्रार ने अपनी पिछली त्रुटिपूर्ण व्याख्या को सुधारने का प्रयास किया है। श्री वैद्यनाथन, निर्देश पर इस बात पर ज़ोर देते हैं कि आक्षेपित आदेश में व्यक्त मत गलत है, और उपबंध की सही व्याख्या उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत अभिवाकों में स्पष्ट रूप से चित्रित की गई है। ये प्रस्तुतियाँ उस तर्क से विचलन को रेखांकित करती हैं जो आक्षेपित आदेश का समर्थन करता था। उसके प्रासंगिक अंश निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किए गए हैं:

"5. <u>आधार:</u>

...XXX. ...XXX. ...XXX.

घ. माननीय उच्च न्यायालय ने अधिनियम के उद्देश्य और योजना की विवेचना किए बिना पीपीवी और एफआर अधिनियम की धारा 24 (5) को शून्य घोषित करने में गलती की है। यह प्रस्तुत किया गया है कि अधिनियम पौधों की किस्मों, किसानों और पौधा प्रजनकों के अधिकारों की सुरक्षा और पौधों की नई किस्मों के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए एक एम 201 99 प्रभावी प्रणाली की स्थापना के लिए अधिनियमित किया गया है। यह प्रावधान तीसरे पक्ष के अपमानजनक कृत्यों के विरुद्ध प्रजनक के हितों की रक्षा करता है। आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि यदि उक्त सुरक्षा मौजूद नहीं हो, तो कोई भी व्यक्ति पीपीवी और एफआर अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत किए बिना प्रजनक की तकनीक को चुरा सकता है, विपणन /विक्रय कर सकता है।

ङ. धारा 24 (5) के अंतर्गत शक्ति की व्याप्ति और परिधि अधिनियम के अन्य उपबंधों से समझी जाना चाहिए और यह शक्ति केवल आवेदन से शुरू होकर आवेदन पर अंतिम निर्णय तक की अवधि के दौरान आवेदक के

हित को सुरक्षित रखने तक सीमित है, जो एक अंतरिम उपाय है। आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि अंतरिम उपायों के अनुदान के सिद्धांत अच्छी तरह से स्थापित हैं और किसी भी आदेश को पारित करने से पहले रजिस्ट्रार असुविधा के संतुलन, दुरुपयोग की संभावना और आवेदक के हितों को बहाल करने की क्षमता को ध्यान में रखेगा यदि आवेदन अंततः स्वीकृत हो जाता है। रजिस्ट्रार द्वारा पारित आदेश हमेशा न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन होता है।

...XXX. ...XXX. ...XXX.

ञ. माननीय उच्च न्यायालय ने इंटरनेशनल कन्वेंशन फॉर द प्रोटेक्शन ऑफ न्यू वैराइटीज ऑफ प्लांट्स, 1991 (यूपीओवी) के अनुच्छेद 13 की विवेचना किए बिना धारा 24 को शून्य घोषित करने में गलती की है। जिसमें कहा गया है कि संविदा करने वाला प्रत्येक पक्ष प्रजनक के अधिकार के अनुदान के लिए आवेदन दाखिल करने या प्रकाशित करने और उस अधिकार के अनुदान के बीच की अवधि के दौरान प्रजनक के हितों की रक्षा के लिए तैयार किए गए उपाय प्रदान करेगा। यह प्रस्तुत किया गया है कि ऐसी कोई अनिवार्य आवश्यकता नहीं है कि किसी उत्पाद का विक्रय करने के लिए उसे पीपीवी अधिकारियों के साथ पंजीकृत किया जाए। यह भाग यूपीओवी कन्वेंशन की स्थितियों से लिया गया था।

ट. एक बार जब हित एक अधिकार में बदल जाता है, तो मुआवजे के लिए एक आदेश दिया जा सकता है जो पीपीवी और एफआर 'अधिनियम, 2001 की धारा 5.6 (1) (ङ) के अंतर्गत पौधा किस्म संरक्षण अपीलीय न्यायाधिकरण (पीवीपीएटी) के समक्ष अपील करने योग्य है।"

7. उपरोक्त पर विचार करते हुए, न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि रजिस्ट्रार ने उपबंध की ऐसी व्याख्या अपनाकर अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन किया है

जो न केवल इसकी स्पष्ट भाषा के साथ असंगत है बल्कि उक्त उपबंध के विभाग की अपनी व्याख्या से भी भिन्न है। इस तरह की गलत व्याख्या कानून द्वारा निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में स्पष्ट विफलता को दर्शाती है, जिससे रजिस्ट्रार का निर्णय मौलिक रूप से त्रुटिपूर्ण हो जाता है। तदनुसार, केवल इसी आधार पर आदेश अपास्त किए जाने के अधीन है।

8. अब हमें अधिनियम की धारा 24(5) की प्रवर्तनीयता के संबंध में प्रत्यर्थी सं. 2 के अधिवक्ता श्री चेतन लोकुर द्वारा उठाई गई चिंताओं का समाधान करना चाहिए। इस उपबंध को ***'प्रभात एग्री बायोटेक बनाम पौधा किस्म रजिस्ट्रार'*** मामले में इस न्यायालय की खंड पीठ द्वारा अधिकारातीत माना गया था। हालाँकि, इस घोषणा को बाद में उच्चतम न्यायालय ने ***'पायोनियर ओवरसीज कार्पोरेशन बनाम कावेरी सीड कंपनी लिमिटेड'*** मामले में 31 जुलाई, 2023 के आदेश के माध्यम से रोक दिया है। इसलिए, यह प्रश्न उभर कर सामने आता है कि उच्च न्यायालय द्वारा उपबंध को अधिकारातीत घोषित करने पर उच्चतम न्यायालय की रोक का क्या प्रभाव पड़ेगा।

9. श्री लोकुर ने दृढ़ता से प्रतिवाद दिया है कि उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुदत्त रोक अधिनियम की धारा 24(5) को भारत के संविधान के अधिकारातीत घोषित करने से संबंधित खंड पीठ के निर्णय के प्रभाव को अकृत नहीं करती है।

यह तर्क बताता है कि उच्चतम न्यायालय की रोक केवल खंड पीठ के निर्णय के निष्कर्षों या तर्क को मिटाए बिना उसके निष्पादन या प्रवर्तन को निलंबित करती है। इस तर्क का समर्थन करने के लिए, श्री लोकुर ने रोक आदेश के विधिक निहितार्थ और प्रभाव को स्पष्ट करने के लिए ***'श्री चामुंडी मोपेड्स लिमिटेड बनाम चर्च ऑफ साउथ इंडिया ट्रस्ट एसोसिएशन सीएसआई सीआईएनओडी सचिवालय, मद्रास'*** मामले में उच्चतम न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों का सहारा लिया:

> *""**10.** वर्तमान मामले में, अधिनियम की धारा 15 और 16 के अंतर्गत बोर्ड के समक्ष कार्यवाही 26 अप्रैल, 1990 के बोर्ड के आदेश द्वारा समाप्त कर दी गई थी, जिसमें बोर्ड ने अपने समक्ष तथ्यों और सामग्री पर विचार करने पर पाया कि अपीलार्थी-कंपनी अपनी भारी संचित हानियों और देनदारियों के कारण आर्थिक और व्यावसायिक रूप से अव्यवहार्य हो गई है और इसे बंद कर दिया जाना चाहिए। बोर्ड के उक्त आदेश के विरुद्ध अधिनियम की धारा 25 के अंतर्गत अपीलार्थी-कंपनी द्वारा दायर अपील को अपीलीय प्राधिकरण ने 7 जनवरी 1991 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया था। इन आदेशों के परिणामस्वरूप, 21 फरवरी, 1991 को अधिनियम के अंतर्गत कोई भी कार्यवाही न तो बोर्ड के समक्ष और न ही अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष लंबित थी, जब दिल्ली उच्च न्यायालय ने 7 जनवरी, 1991 के अपीलीय प्राधिकरण के आदेश के कार्यान्वयन पर रोक लगाते हुए अंतरिम आदेश पारित किया। उच्च न्यायालय का उक्त रोक आदेश उस कार्यवाही को पुनर्जीवित करने का प्रभाव नहीं डाल सकता है जिसका अपीलीय प्राधिकरण ने अपने आदेश दिनांक 7 जनवरी, 1991 द्वारा निपटान कर दिया था। **<u>चुनौती के अधीन आदेश के क्रियान्वयन पर रोक लगाने वाले</u>***

अंतरिम आदेश के प्रभाव पर विचार करते समय, किसी आदेश को अभिखंडित करने और किसी आदेश के क्रियान्वयन पर रोक के बीच अंतर किया जाना चाहिए। किसी आदेश को अभिखंडित करने से वह स्थिति बहाल हो जाती है जो उस आदेश के पारित होने की तिथि पर थी जिसे अभिखंडित कर दिया गया है। हालाँकि, किसी आदेश के क्रियान्वयन पर रोक लगाने से ऐसा परिणाम नहीं होता है। इसका मतलब केवल यह है कि जिस आदेश पर रोक लगाई गई है वह रोक आदेश पारित होने की तिथि से लागू नहीं होगा और इसका मतलब यह नहीं है कि उक्त आदेश का अस्तित्व समाप्त हो गया है। इसका मतलब यह है कि यदि अपीलीय प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश को अभिखंडित कर दिया जाता है और मामले को प्रतिपेषित कर दिया जाता है, तो इसका परिणाम यह होगा कि अपीलीय प्राधिकरण के उक्त आदेश द्वारा निपटान की गई अपील बहाल हो जाएगी और यह कहा जा सकता है कि अपीलीय प्राधिकरण के आदेश को अभिखंडित करने के बाद यह अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष लंबित है। अपीलीय प्राधिकरण के आदेश के क्रियान्वयन पर रोक लगाने वाले आदेश के संबंध में ऐसा नहीं कहा जा सकता क्योंकि उक्त आदेश के बाद भी, अपीलीय प्राधिकरण का आदेश विधि में अस्तित्व में है और जब तक यह अस्तित्व में है, तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि उक्त आदेश द्वारा जिस अपील का निपटान किया गया है उसका निपटान नहीं हुआ है और वह अभी भी लंबित है। इसलिए, हमारी राय है कि दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा 7 जनवरी 1991 के अपीलीय प्राधिकरण के आदेश के क्रियान्वयन पर रोक लगाते हुए 21 फरवरी 1991 के अंतरिम आदेश को पारित करने से अपील, जिसे अपीलीय प्राधिकरण ने अपने आदेश दिनांक 7 जनवरी, 1991 द्वारा खारिज कर दिया था, को पुनर्जीवित करने का प्रभाव नहीं पड़ता है और यह नहीं कहा जा सकता कि 21 फरवरी 1991 के बाद, उक्त अपील पुनर्जीवित हो गई और अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष लंबित थी। *मामले को देखते हुए, यह नहीं कहा जा सकता है कि कंपनी को बंद करने के लिए या 6 नवंबर*

1991 को जब खंड पीठ ने 14 अगस्त 1991 के विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी-कंपनी द्वारा दायर मू.प.अ. सं. 16/1991 को खारिज करने का आदेश पारित किया, तब कर्नाटक उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 14 अगस्त, 1991 को पारित आदेश की तिथि पर अधिनियम के अंतर्गत कोई भी कार्यवाही बोर्ड या अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष लंबित थी। इसलिए, अधिनियम की धारा 22(1) का अवलंब नहीं लिया जा सका और प्रत्यर्थीगण द्वारा दायर समापन याचिका से निपटने में उच्च न्यायालय में कोई अड़चन नहीं थी। यह एकमात्र प्रश्न है जिसे 1992 की सिविल अपील सं. 126 में अपीलार्थी-कंपनी को बंद करने के आदेश के विरुद्ध प्रचारित किया गया है। अतः उक्त अपील विफल हो जाती है और खारिज किए जाने योग्य है।"

[ज़ोर दिया गया]

10. श्री लोकुर ने आगे प्रस्तुत किया कि उपरोक्त निर्णय का कई उच्च न्यायालयों द्वारा पालन किया गया है। विशेष रूप से, वह ***'सीसीई बनाम स्पेस टेलीलिंक लिमिटेड'*** मामले में इस न्यायालय की एक खंड पीठ के निर्णय पर भरोसा करते हैं, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि निचले न्यायालय/प्राधिकरण के निर्णय को निलंबित रखने वाला आदेश रोके गए निर्णय के तर्क को विरुपित नहीं करेगा। इसके अतिरिक्त, उन्होंने ***'निरंजन चटर्जी और अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य'*** में कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ के निर्णय पर भी भरोसा किया है, जिसमें उच्चतम न्यायालय द्वारा

इसके क्रियान्वयन पर रोक के बावजूद अधिकारातीत की घोषणा को अभी भी पूर्ववर्ती मूल्य माना गया था।

11. उपरोक्त निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, श्री लोकुर का प्रतिवाद है कि खंड पीठ के निर्णय को केवल उच्चतम न्यायालय द्वारा रोक लगाने के आधार पर अस्तित्व से मिटा दिया नहीं जा सकता है। उनका तर्क है कि खंड पीठ द्वारा दिया गया तर्क अभी भी इस हद तक लागू होगा कि अधिनियम की धारा 24(5) असंवैधानिक बनी हुई है और इसलिए इसका कोई विधिक प्रभाव नहीं है। तदनुसार, वे प्रस्तुत करते हैं कि, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, रजिस्ट्रार द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण के बाद भी, आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं है।

12. न्यायालय ने श्री लोकुर के तर्कों पर ध्यानपूर्वक विचार किया है, लेकिन उन्हें बाध्यकारी नहीं पाया। यह समझना महत्वपूर्ण है कि अंतरिम रोक का प्रभाव उन विशिष्ट परिस्थितियों और संदर्भ के आधार पर भिन्न होता है जिसमें इसे दिया गया है। विवाद की प्रकृति, चाहे इसमें व्यक्तिगत पक्ष शामिल हों या व्यापक विधिक या संवैधानिक महत्व के प्रश्न हों, किसी भी रोक के निहितार्थ को समझने में न्यायिक समीक्षा के लिए एक प्रासंगिक कारक होगा। रोक अधिरोपित करने के पीछे का तर्क स्वयं विवादों जितना ही विविध है, और अक्सर प्रत्येक

मामले की अनूठी परिस्थितियों के अनुरूप सावधानीपूर्वक तैयार किया जाता है। यह वह विशिष्टता है जो रोक लगाने के प्रभावों की व्याख्या करने के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण का विरोध करती है, अर्थात, रोक आदेश के प्रभाव को समझने के लिए सभी के लिए सुचारु एक दृष्टिकोण नहीं हो सकता है। इसलिए, न्यायालय रोक आदेश के प्रभाव का मूल्यांकन करते समय मामले-दर-मामले के परीक्षण की आवश्यकता पर ज़ोर देता है। रोक के प्रत्येक आदेश पर मामले के विशिष्ट पहलुओं और संबोधित विधिक मुद्दों की जटिलताओं पर सावधानीपूर्वक विचार करते हुए, उसके गुणागुण के आधार पर विचार किया जाना चाहिए।

13. मौजूदा मामले में, ***प्रभात एग्री बायोटेक (पूर्वोक्त)*** में खंड पीठ के निर्णय ने विशेष रूप से अधिनियम की धारा 24(5) की संवैधानिक वैधता को संबोधित किया, जो रिट याचिकाओं से उत्पन्न हुई थी, जिसमें उपबंध की शक्तिमत्ता पर प्रश्न उठाया गया था। खंड पीठ के न्यादेश का सार निर्णय के उद्धृत अंश में समाहित है:

> *"40. ...वर्तमान में प्रचलित पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम की धारा 24 (5) निस्संदेह अपमानजनक प्रथाओं को रोकने के लिए एक पर्याप्त उपाय हो सकती है (यह मानते हुए कि जो अपमानजनक है उसे समय के साथ परिभाषित किया जा सकता है); फिर भी उपबंध के दुरुपयोग का खतरा और निर्दोष प्रजनकों, कृषकों और संकर और पौधों की किस्मों के विकास के व्यवसाय में लगे लोगों को लंबे समय तक चोट लगने का खतरा, शक्ति की अनियंत्रित प्रकृति को देखते हुए, इसके लाभों से कहीं*

अधिक है, जो विधि के शासन के लिए विनाशकारी है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के विपरीत है। इसलिए, पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 2001 की धारा 24(5) को शून्य घोषित किया जाता है।..."

14. इसके बाद, उच्चतम न्यायालय ने हस्तक्षेप करते हुए ***पायनियर ओवरसीज (पूर्वोक्त)*** में अपने निर्णय के माध्यम से इस निर्णय के संचालन पर रोक लगाते हुए निम्नानुसार निर्देश दिया:

"अधिवक्ता को सुनने के बाद न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश दिया

आदेश

मामले को अंतिम निपटान के लिए 22 नवंबर, 2017 को सूचीबद्ध किया जाए।

उस समय तक सभी क्षेत्रों के अभिवाक पूरे कर लिए जाएँगे।

इस बीच, 2009 की रिट याचिका (सि.) सं. 250/2009 और 7102/2011 में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित 2 दिसंबर, 2016 के निर्णय के क्रियान्वयन पर रोक रहेगी।"

[ज़ोर दिया गया]

15. इस प्रकार हम उल्लेख करते हैं कि खंड पीठ ने विशेष रूप से अधिनियम की धारा 24(5) की संवैधानिकता को स्पष्ट किया, और अपने निर्णय के माध्यम से उपबंध को असंवैधानिक ठहराया। इस सटीक निर्धारण को उच्चतम न्यायालय के अंतरिम रोक आदेश द्वारा रोक दिया गया है, जो बिना किसी निर्दिष्ट शर्तों

या सीमाओं के जारी किया गया था। इस न्यायिक हस्तक्षेप का सार मामले पर एक व्यापक और अंतिम समाधान लंबित होने तक खंड पीठ की असंवैधानिकता की घोषणा के प्रभाव और संचालन को निलंबित करने के उच्चतम न्यायालय के इरादे में निहित है। इसके आलोक में, उच्चतम न्यायालय के अंतरिम आदेश की सबसे तार्किक व्याख्या यह है कि इसे खंड पीठ की घोषणा पर अस्थायी रोक के रूप में देखा जाए, ताकि उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णायक निर्णय दिए जाने तक धारा 24(5) की यथास्थिति बनी रहे। रोक के बावजूद खंड पीठ के निर्णय के निरंतर पूर्ववर्ती प्रभाव के संबंध में श्री लोकुर के तर्क पर विचार करना अनिवार्य रूप से रोक जारी करने के पीछे उच्चतम न्यायालय के इरादे को नकार देगा। ऐसा परिप्रेक्ष्य रोक के व्यावहारिक प्रभाव को दुर्बल कर देगा, और यह सुझाव देगा कि उच्चतम न्यायालय का अंतरिम उपाय बिना किसी ठोस विधिक परिणाम के है।

16. उपरोक्त के आलोक में, श्री लोकुर द्वारा अपने तर्क के समर्थन में उद्धृत उदाहरणों पर विचार करना भी उचित होगा। सबसे पहले, हमारे लिए ***चामुंडी मोपेड्स (पूर्वोक्त)*** में उच्चतम न्यायालय के अभिनिर्धारण की उस संदर्भ में विवेचना करना अनिवार्य है जिसमें इसे दिया गया था। उक्त निर्णय में, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय के रोक आदेश से अपीलीय प्राधिकरण के निर्देश को मिटाकर अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष कार्यवाही को

पुनर्जीवित करने का प्रभाव नहीं पड़ेगा। तदनुसार, न्यायालय ने किसी आदेश पर रोक लगाने और उसे अभिखंडित करने के बीच अंतर करते हुए कहा कि रोके गए निर्णय के अस्तित्व को नकारने के लिए किसी रोक आदेश पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। हालाँकि, उच्चतम न्यायालय ने साथ ही कहा कि रोक आदेश निचले न्यायालय/प्राधिकरण के निर्णय को अस्तित्व से नहीं मिटाता है, लेकिन यह उसके परिचालन परिणामों को रोक देता है। तदनुसार, वर्तमान मामले में, ***चामुंडी मौपेड्स (पूर्वोक्त)*** में उच्चतम न्यायालय के न्यायशास्त्र का मतलब यह होगा कि खंड पीठ के अंतर्निहित तर्क और विश्लेषण विधिक संभाषण का हिस्सा बने रहेंगे और भविष्य के विचार-विमर्श और निर्णयों को प्रभावित करेंगे, हालाँकि, रोक प्रभावी होने की अवधि के लिए, धारा 24(5) पर खंड पीठ के निर्णय को अधिकारातीत होने के आवेदन को रोक कर रखा गया है, जिससे उपबंध प्रवृत्त रहेगा और कानून के मूल इरादे के अनुसार लागू रहेगा।

17. श्री लोकुर द्वारा उद्धृत शेष दो मामलों का भी कोई लाभ नहीं है। ***सीसीई (पूर्वोक्त)*** में, इस न्यायालय की खंड पीठ ने ***चामुंडी मौपेड्स (पूर्वोक्त)*** पर भरोसा करते हुए कहा कि अंतरिम रोक रोके गए निर्णय को अकृत नहीं करती है। हालाँकि, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि न्यायालय स्वतंत्र रूप से रुके हुए निर्णय के तर्क के साथ तालमेल बिठाने के निष्कर्ष पर पहुँचा, लेकिन किसी भी बिंदु पर यह निष्कर्ष नहीं निकाला कि रोके गए निर्णय पर अभी भी एक पूर्ववर्ती

का बाध्यकारी प्रभाव होगा। यह ***निरंजन चटर्जी (पूर्वोक्त)*** के मामले से अलग है, जिसमें कलकत्ता उच्च न्यायालय ने वास्तव में अभिनिर्धारित किया था कि रोके गए निर्णय का पूर्ववर्ती मूल्य बना रहेगा। हालाँकि, उक्त निर्णय की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि वर्तमान मामले से बहुत भिन्न है, क्योंकि उच्चतम न्यायालय द्वारा लगाई गई रोक में यथास्थिति बनाए रखने के लिए विशिष्ट शर्तों के साथ-साथ अन्य निर्देश भी दिए गए हैं, जिसने अंततः इस तरह के रोक के प्रभाव के बारे में न्यायालय की समझ को निर्देशित किया। वर्तमान मामले में, जैसा कि ***पायनियर ओवरसीज (पूर्वोक्त)*** में उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त उद्धृत रोक आदेश से स्पष्ट है कि ऐसी किसी भी तरह की शर्तों का उल्लेख नहीं किया गया है। परिणामस्वरूप, इसका मतलब यह होगा कि खंड पीठ द्वारा अधिनियम की धारा 24(5) को अधिकारातीत घोषित करने की कार्रवाई पर रोक रहेगी और उक्त उपबंध तब तक खंड पीठ के निर्णय से पहले की ही तरह अस्तित्व में रहेगा जब तक उच्चतम न्यायालय द्वारा अंतिम निर्धारण नहीं किया जाता। इस निष्कर्ष को इस तथ्य से भी समर्थन मिलता है कि वर्तमान मामले में, अधिनियम की धारा 24(5) के अंतर्गत अपीलार्थी का आवेदन उच्चतम न्यायालय की रोक के बाद दायर किया गया था, फिर भी उस पर विचार किया गया, जो दर्शाता है कि इस मुद्दे पर रजिस्ट्रार की स्थिति उपबंध की निरंतर वैधता के संबंध में न्यायालय के उपरोक्त तर्क के अनुरूप है।

18. न्यायालय ने अपीलार्थी की ***वीरभद्र सिंह और अन्य बनाम केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो और अन्य*** पर निर्भरता में भी गुणागुण पाया है, जिसमें इस न्यायालय ने श्री लोकुर द्वारा उठाए गए एक समान तर्क पर विचार किया था और निम्नलिखित प्रभाव से खारिज कर दिया था:

> ***"199****. जहाँ तक नवेंद्र कुमार (पूर्वोक्त) मामले में गुवाहाटी उच्च न्यायालय के निर्णय पर आधारित विद्वान महाधिवक्ता श्री डोगरा की प्रस्तुति का प्रश्न है, मेरा विचार है कि चूँकि उक्त निर्णय पर उच्चतम न्यायालय द्वारा रोक लगा दी गई है, इसलिए उक्त निर्णय को लागू नहीं किया जा सकता। श्री चामुंडी मोपेड्स लिमिटेड (पूर्वोक्त) पर श्री डोगरा द्वारा किया गया भरोसा कोई फायदा नहीं है। उस मामले में, औद्योगिक और वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड (बीआईएफआर) ने अपीलार्थी कंपनी को बंद करने का आदेश दिया था। अपीलीय प्राधिकरण ने इसे बनाए रखा। उच्च न्यायालय ने रिट अधिकार क्षेत्र में अपीलीय प्राधिकरण के आदेश के कार्यान्वयन पर रोक लगा दी थी। उच्चतम न्यायालय ने इस संदर्भ में उक्त रोक आदेश के प्रभाव का परीक्षण किया, कि इस बीच, अधिकार क्षेत्र वाले उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को समापन का निर्देश दिया और समापन आदेश के विरुद्ध अपील भी खारिज कर दी गई। **इस संदर्भ में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि केवल उच्च न्यायालय द्वारा अपीलीय प्राधिकरण के आदेश पर रोक लगाने का मतलब अपीलार्थी कंपनी को बंद करने के बीआईएफआर के आदेश के विरुद्ध अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष अपील को पुनर्जीवित करना नहीं है। अपीलीय प्राधिकरण के आदेश को अभिखंडित करने पर ही अपील पुनर्जीवित होगी** - और तब यह कहा जा सकता है कि रुग्ण औद्योगिक कंपनी (विशेष उपबंध) अधिनियम, 1985 की धारा 22 के अंतर्गत वर्जन लागू होगा। ...*
>
> ***...XXX... ....XXX... ....XXX...***

200. ***<u>वर्तमान मामले में स्थिति यह है कि गुवाहाटी उच्च न्यायालय के निर्णय ने सीबीआई की विधिक स्थिति के संबंध में एक घोषणा की। उस घोषणा पर रोक लगा दी गई है। इस प्रकार, सीबीआई की विधिक स्थिति उक्त निर्णय से अप्रभावित रहेगी। उक्त निर्णय पर रोक का मतलब यह नहीं है कि गुवाहाटी उच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाही फिर से शुरू हो जाएगी, या यह कि उक्त मुद्दा अभी भी उक्त उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि गुवाहाटी उच्च न्यायालय का निर्णय अपास्त नहीं किया गया है, लेकिन इसका कोई प्रभाव नहीं है। इस पर उक्त उच्च न्यायालय द्वारा एक आधिकारिक घोषणा के रूप में भरोसा नहीं किया जा सकता है। इसका पालन नहीं किया जा सकता, या इसे एक उदाहरण के तौर पर लागू नहीं किया जा सकता।"***</u>***

[ज़ोर दिया गया]

19. इसलिए, न्यायालय प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से उठाए गए इस तर्क से असंतुष्ट है, और तदनुसार ***वीरभद्र सिंह (पूर्वोक्त)*** में उपरोक्त तर्क से यह अभिनिर्धारित करना उचित है कि अधिनियम की धारा 24(5) को अधिकारातीत घोषित करने से, हालाँकि इसका अस्तित्व समाप्त नहीं हुआ है, फिर भी उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुदत्त रोक को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय पर इसका विधिक रूप से कोई बाध्यकारी प्रभाव नहीं पड़ेगा। दूसरे शब्दों में, अधिनियम की धारा 24(5) को कानून से नहीं हटाया गया है, और श्री लोकुर द्वारा इस आशय का तर्क खारिज कर दिया गया है।

20. यह हमें विचार के लिए अंतिम मुद्दे पर लाता है, जो कि आवेदन बहाल होने पर रजिस्ट्रार द्वारा विचार की जाने वाली राहत की प्रकृति से संबंधित है। इस मुद्दे पर, श्री लोकुर ने आवेदन दाखिल करते समय उठाए गए दोषों के उत्तर में अपीलार्थी द्वारा पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण को लिखे गए पत्राचार पर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित किया है। स्पष्टता के लिए संपूर्ण पत्राचार को उद्धृत करना उचित होगा:

"प्रति,
पौधा किस्म और कृषक अधिकार प्राधिकरण
नई दिल्ली-110012

28.06.2021

संदर्भ में: ***<u>उम्मीदवार संकर राधिका-भिंडी किस्म - आरईजी/2018/164एच के संबंध में यूपीएल लिमिटेड द्वारा पीपीवी और एफआर अधिनियम, 2001 के 24(5) के अंतर्गत आवेदन</u>***

विषय: <u>दोषों का निवारण</u>

महोदय/महोदया,

हम उपरोक्त धारा 24(5) आवेदन में आवेदक के अधिवक्ता हैं। उठाए गए दोषों के संबंध में हम निम्नलिखित प्रस्तुत करते हैं:-

1. <u>दोष 1:-</u> प्रपत्र पी.वी.-1 में प्राधिकरण प्रपत्र दाखिल किया जा रहा है। आप कृपया इसे पहले से ही अभिलेख में दर्ज वकालतनामा के स्थान पर रख सकते हैं।

2. <u>दोष 2:-</u>

(क) यह विनम्रतापूर्वक प्रस्तुत किया जाता है कि पैराग्राफ 18(क), 18(ख) और 18(ग) में माँगी गई राहत धारा 24(5) के दायरे में है। कानून में स्वयं ऐसा कोई बहिष्करण नहीं है और ऐसी राहत के अनुदान को रोकने के लिए विद्वान रजिस्ट्रार की शक्तियों को सीमित करने वाली कोई बाध्यकारी न्यायिक पूर्वनिर्णय नहीं हैं। यहाँ तक कि रि.या.(सि.) 250/2009 में माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय पर भी भारत के माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा रोक लगा दी गई है।

<u>फिर भी, वर्तमान उदाहरण में और उठाई गई आपत्ति पर विचार करते हुए, इस संबंध में हमारे अधिकारों और प्रतिवादों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, और इसे पूरी तरह से सुरक्षित रखते हुए और उचित समय पर या भविष्य की कार्यवाही में व्यादेश राहत के लिए ऐसी प्रार्थना पर ज़ोर देने की लालसा रखते हुए, हम प्रस्तुत करते हैं कि आवेदक फिलहाल व्यादेश राहत के लिए उक्त प्रार्थनाओं पर ज़ोर नहीं डाल रहा है।</u>

(ख) जहाँ तक अनुच्छेद 19 में राहत की एकपक्षीय प्रकृति का संबंध है, यह प्रस्तुत किया गया है कि धारा 24(5) का दायरा किसी भी तरह से एकपक्षीय राहत देने पर रोक नहीं लगाता है और प्राधिकरण के पास ऐसी राहत देने की शक्ति है। हालाँकि, वर्तमान उदाहरण में और उठाई गई आपत्ति के आलोक में, प्रार्थना पर ज़ोर नहीं दिया गया है, भले ही यह आवेदक की प्रस्तुति है कि यह विधि और धारा 24(5) के अंतर्गत संधार्य है। एकपक्षीय राहत की छूट को आवेदक के अधिकारों और विधि तथा समानता संबंधी प्रतिवादों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना माना जा सकता है। इसके बजाय, आवेदक नोटिस के बाद केवल अंतरिम आदेशों के लिए ज़ोर दे रहा है।

तदनुसार, पैराग्राफ 18, 19 पर संशोधित प्रार्थना इसके साथ दायर की जा रही है। आप कृपया इसे पहले से ही अभिलेख में दर्ज प्रार्थना पृष्ठों के स्थान पर प्रतिस्थापित कर सकते हैं।

3. <u>दोष 3</u>:-
नोट किया गया। और संशोधित प्रार्थना इसके साथ दायर की जा रही है।

तदनुसार, मैं कहता हूं कि सभी दोष ठीक कर दिए गए हैं और आप कृपया मामले पर जल्द से जल्द कार्रवाई करें क्योंकि मामले बहुत आवश्यक है।

भवदीय

आदर्श रामानुजन/लज़ाफीर अहमद बी. एफ.
आवेदक के लिए अधिवक्तागण"

[ज़ोर दिया गया]

21. श्री लोकुर का तर्क है कि उपरोक्त दोष सं. 2 को हटाते समय, अपीलार्थी ने आवेदन के पैराग्राफ सं. 18 (क), (ख) और (ग) में माँगी गई राहत को छोड़ दिया है और इसलिए अपील में इसे दोबारा नहीं उठा सकता है। हालाँकि, न्यायालय की राय में, यह पत्राचार का गलत अर्थ है। अपीलार्थी ने बिना किसी अनिश्चित शब्दों के स्पष्ट किया था कि वे केवल व्यादेश राहत के लिए प्रार्थनाओं पर ज़ोर नहीं दे रहे थे। इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी के अधिवक्ता ने न्यायालय को सूचित किया कि उपरोक्त प्रार्थनाओं के अतिरिक्त, 28 जून, 2021 को दायर संशोधित प्रार्थनाओं के अनुसार माँगी गई एकमात्र शेष राहत पैराग्राफ 18(घ) में निहित है, जो निम्नानुसार है:

"घ. कोई अन्य आदेश पारित करें जैसा कि विद्वान रजिस्ट्रार मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उचित समझें"

22. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह अभिनिर्धारित करना गलत होगा कि अपीलार्थी ने व्यादेश राहत के लिए अपनी प्रार्थनाओं को त्यागने के अतिरिक्त, पैराग्राफ सं. 18(क) और 18(ग) में बताए अनुसार क्षति और लागत के लिए अपनी प्रार्थना भी छोड़ दी थी। इससे आवेदन प्रभावी रूप से निष्फल हो जाएगा।

23. पूर्ववर्ती कारणों और विश्लेषण पर विचार करते हुए, न्यायालय की राय है कि वर्तमान अपील को अनुमति दी जानी चाहिए। तदनुसार, निम्नलिखित निर्देश जारी किए जाते हैं:

23.1. 25 जुलाई, 2022 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है।

23.2. अधिनियम की धारा 24(5) के अंतर्गत अपीलार्थी के आवेदन को उसकी मूल सं. पर बहाल कर दिया गया है। 28 जून, 2021 के अपीलार्थी के व्याख्या पत्र के साथ संलग्न संशोधित प्रार्थनाओं के पैराग्राफ सं. 18(क), 18(ग) और 19 में माँगी गई राहत के संबंध में रजिस्ट्रार विधि के अनुसार अपने गुणागुण के आधार पर निर्णय लेने के लिए आगे बढ़ेगा।

23.3. इस न्यायालय के निर्देशों के अनुसार प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा सीलबंद लिफाफे में बताई गई जानकारी अपीलार्थी के बहाल आवेदन पर निर्णय के समय उचित विचार के लिए रजिस्ट्रार को प्रेषित की जाएगी।

24. उपरोक्त निर्देशों के साथ लंबित आवेदनों सहित अपील का निपटान किया जाता है।

न्या. संजीव नरूला

22 फरवरी, 2024/एबी

(संशोधित और 07 मार्च, 2024 को जारी किया गया)

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्द्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*